अनुक्रमणिका

भूमिका.....**i-iv**

प्रथम अध्याय.....**1–87**

भारत में स्त्री–दृष्टि का विकास और हिन्दी कथा–साहित्य (प्रारम्भ से 1990 तक) : एक विहंगावलोकन

(क) प्राचीन एवं मध्यकाल में स्त्री मुक्ति का परिप्रेक्ष्य.....1

(ख) राष्ट्रीय जागरण और स्वाधीनता आन्दोलन के दौर में स्त्री मुक्ति और अस्मिता का विकास.....16

(ग) आधुनिक हिन्दी कथा–साहित्य में स्त्री–दृष्टि (प्रारम्भ से 1990 तक) प्रेमचंद पूर्व, प्रेमचंदोत्तर और सन् 60 से 90 के दशक का परिदृश्य.....27

अध्याय द्वितीय.....**88–145**

समकालीन हिंदी उपन्यासों में स्त्री–दृष्टि का विकास (1990 ई0 से आज तक).....88

(क) पुरुषों द्वारा लिखित उपन्यासों में स्त्री–दृष्टि.....88

(ख) महिलाओं द्वारा लिखित उपन्यासों में स्त्री–दृष्टि.....112

अध्याय तृतीय.....**146–198**

समकालीन हिन्दी कहानियों में स्त्री–दृष्टि का विकास.....146

(क) पुरुषों द्वारा लिखित कहानियाँ.....146

(ख) महिलाओं द्वारा लिखित कहानियाँ.....160

चतुर्थ अध्याय.....**199–267**

महिला आत्मकथाओं में स्त्री–दृष्टि का परिप्रेक्ष्य.....199

(क) हिन्दी महिला आत्मकथाएँ.....199

(ख) हिन्दी में अनूदित महिला आत्मकथाएं.....251

अध्याय पंचम.....**268–280**

कथा भाषा और शिल्पगत संरचना पर प्रभाव.....268

उपसंहार.....**281–287**

सन्दर्भ ग्रंथ–सूची.....**288–295**

भूमिका

'स्त्री–दृष्टि' स्त्री चिंतन में साहित्य को दो भागों में विभाजित करता है। पहला स्त्री साहित्य और दूसरा स्त्रीवादी साहित्य। इसके पीछे आलोचकों व विद्वानों का तर्क है कि–जो साहित्य स्त्री के द्वारा स्त्री के विषय में लिखा जाता है वह स्त्री–साहित्य कहलायेगा और जो साहित्य स्त्री दृष्टि की अवधारणा में स्त्री व पुरुष दोनों की रचनाओं को सम्मिलित किया जायेगा जिसमें स्त्री–संबंधी बुनियादी प्रश्नों को उठाया जाता है। यह दृष्टि पितृसत्तात्मक मूल्यों, समाज द्वारा निर्धारित दोहरे मानदण्डों, लिंगभेद के कारण दयनीय जीवन स्थितियों में फँसी स्त्रियों एवं समाज में स्त्री की छवि को परखने की नयी दृष्टि देती है। उनकी दृष्टि में स्त्री–शोषण एवं वर्चस्ववादी सामंती व्यवस्था है जिसने स्त्री को सदैव नैतिकता, मर्यादा, आदर्श और पारिवारिक दायित्वों की सीमा में बाँधा है। स्त्री–दृष्टि ने इन तथ्यों को उजागर किया और उससे मुक्त होने की पहल भी करती है। समकालीन कथा–साहित्य में स्त्री–पुरुष दोनों रचनाकारों ने अपनी–अपनी रचनाओं में स्त्री–दृष्टि विषयक विभिन्न सवालों को उठाया है और उनका निराकरण करने का प्रयास भी किया है। स्त्री साहित्य के भीतर केवल महिला रचनाकार आयेंगी जबकि, स्त्रीवादी या नारीवादी साहित्य में स्त्री–पुरुष दोनों सम्मिलित हैं।

स्त्री–दृष्टि से तात्पर्य समाज को देखने का स्त्रियोचित नज़रिया अर्थात् स्त्री के लिए क्या सही है? क्या गलत है? निर्णय स्त्री की दृष्टि से किया जाये, क्योंकि अब तक सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था यहाँ तक कि स्त्री से जुड़ी हुई प्रत्येक समस्या और उनको देखने का पक्ष पुरुषोचित रहा है। स्त्री–दृष्टि उस दृष्टि को प्रमुखता देती है, जिसमें समाज, समाज द्वारा स्थापित मानदण्डों को स्त्रियों की दृष्टि से देखा जाये, उसे उसके नज़रिये से परिभाषित किया जाये तथा उन मूल्यों, परम्पराओं और आदर्शों की पुनर्व्याख्या की जाये, जिसमें 'स्त्रीत्व' की छद्म छवि गढ़ते हुए एक निश्चित खाँचे में

डाले रखा। उसकी अभिव्यक्ति को दबाये रखा और उसके लिए एक निश्चित मूल्य बनाये, जिसके अनुसार चलना स्त्रियों की मजबूरी बनी।

समकालीन स्त्री विषयक चिंतन स्त्री जीवन की समस्याओं एवं दलन के अनुभवों की अभिव्यक्ति करता है। यह पारम्परिक ज्ञान और दर्शन को चुनौती देता है।

स्त्री और पुरुष मानव–जीवन रथ के दो पहिये हैं, दोनों साथ रहकर भी भिन्न हैं। दोनों में प्राकृतिक भिन्नता है। एक की कमी दूसरे के द्वारा पूरी हो जाती है और तभी दोनों मिलकर इस मर्त्यलोक में स्वर्गलोक का सृजन कर सकते हैं। फलतः यह कहना अत्यन्त युक्तिसंगत होगा कि एक के बिना दूसरे का अस्तित्व तक भी नहीं के बराबर है। नारी का स्थान घर में क्या है? और समाज में क्या है? तथा क्या होना चाहिए? इस प्रश्न पर विचार कर लेना आवश्यक है।

व्यवस्था में असंतुष्ट व्यक्ति व्यवस्था में परिवर्तन का आकांक्षी होता है और वह परिवर्तन के लिए संघर्ष भी करता है। भारतीय समाज में स्त्रीमुक्ति, संघर्ष, परिवर्तन की इच्छा से किया हुआ संघर्ष है। समाज ने स्त्री को कभी भी एक मानव के रूप में मान्यता नहीं दी जो उसे मिलनी चाहिए। उसे पुरुष एक वस्तु ही मानता रहा है जिसके कारण मानव रूप में उसकी चेतना का विकास नहीं हो सका। चिरकाल से उसे मानसिक रूप से दबाकर रखा गया और पुरुषवादी व्यवस्था से वह आतंकित होती रही है। किन्तु समय के साथ परिस्थिति में परिवर्तन आता गया। उसमें भी आत्मसम्मान की भावना का धीरे–धीरे निर्माण होता गया। आधुनिक काल तक आते–आते जीवन संबंधी दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आ गया। लोकतंत्र की स्थापना हो जाने एवं उदारता, बौद्धिकता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के कारण स्त्री–पुरुष समानता की बात सामने आयी। स्त्री–मुक्ति आंदोलन से समाज में स्त्री की स्थिति बदली और उसके विभिन्न रूप उभरकर सामने आये।

स्त्री का मुक्त होना मानव भविष्य के स्वस्थ विकास के लिए आवश्यक है। स्त्री मुक्ति की आकांक्षा रखती है। स्त्रीमुक्ति में स्त्रीवादी सामाजिक आन्दोलनों की महत्वपूर्ण

भूमिका रही है। समकालीन कथा साहित्य ने तनाव, कुंठा, अमानवीय व्यवहार, असंतोष, मन की मानसिक छटपटाहट, क्रूर वातावरण, मानसिक अभिव्यक्ति को उजागर कर दिया। यही छटपटाहट सन् 1990 ई. के बाद हिन्दी कथाकारों की रचनाओं में दृष्टिगोचर होती है। सन् 1990 के बाद वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के प्रभाव से हिन्दी–साहित्य भी प्रभावित होने से न बच सका, परिणामस्वरूप अनेक विषयों में परिवर्तन लक्षित हुए जिनमें स्त्री–दृष्टि मुख्य विषय रहा है। स्त्री–दृष्टि के विकास की इस प्रक्रिया में केवल संघर्ष ही नहीं स्त्री–जीवन के अन्य कई पहलुओं को भी स्पर्श किया है।

समकालीन कथा–साहित्य में विशेषकर उपन्यासों व आत्मकथाओं में ऐसी स्त्री का चित्रण किया जा रहा है जो मुक्त हैं, समाज द्वारा निर्धारित मर्यादाएँ तोड़ने में सक्षम है, परम्परागत भूमिका से हटकर अपने स्वतंत्र अस्तित्व व अस्मिता की समझ रखती है और अपनी सामर्थ्य खोजकर उसके बल पर अपनी पहचान बनाती है और बेबाकी से सच बोलती है। स्त्री के सम्मुख नये आयाम, नये वातावरण, नये विषय समावेशित कर व्यक्तित्व विकास, पहचान निर्माण, रोजगार व्यवसाय और महत्वाकांक्षा के नये दरवाजे खोले है।

अध्ययन की सुविधानुसार प्रस्तुत शोध प्रबंध पाँच अध्यायों व उपसंहार में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय में स्त्री–दृष्टि का विकास और हिन्दी कथा–साहित्य का एक विहंगावलोक प्रस्तुत किया गया है। इसके अन्तर्गत ही राष्ट्रीय जागरण और स्वाधीनता आन्दोलन के दौर में स्त्री–मुक्ति व अस्मिता के प्रश्न पर भी समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत है। हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचन्द और नब्बे के दशक तक के प्रेमचंदोत्तर कथा–साहित्य को केन्द्र बिन्दु मानकर कथा–साहित्य के भीतर स्त्री दृष्टि का एक विहंगावलोकन भी किया गया है।

द्वितीय अध्याय के अंतर्गत स्त्री–पुरुष द्वारा लिखे गये समकालीन हिन्दी उपन्यासों में स्त्री दृष्टि के विकास का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय के अंतर्गत स्त्री–पुरुष दोनों द्वारा लिखे गये समकालीन हिन्दी कहानियों में स्त्री–दृष्टि के विकास का अनुशीलन है।

चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत महिला आत्मकथाओं में स्त्रीदृष्टि के सरोकारों की चर्चा की गयी है। इसके अन्तर्गत हिन्दी महिला आत्मकथायें और हिन्दी में अनुदित महिला आत्मकथाओं को सम्मिलित किया गया है।

पंचम अध्याय में समकालीन हिन्दी कथा–साहित्य में कथा–भाषा और शिल्पगत वैशिष्टय का अनुशीलन है। उपसंहार के अंतर्गत सभी अध्यायों के आधार पर अन्तिम निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये हैं।

सर्वप्रथम, मैं प्रस्तुत शोध–प्रबंध को पूर्ण करने में विशेष ज्ञान एवं वस्तु चयन के लिए जिन व्यक्तियों, विद्वानों, संस्थानों एवं साहित्यकारों की कृतियों एवं विचारों से लाभान्वित हुआ, उन सब के प्रति मैं आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ।

मैं उन सभी शुभचितंकों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से शोध–प्रबंध की रचना प्रक्रिया से जुड़े और मेरा उत्साहवर्धन करते रहे हैं।

अपने श्रद्धेय गुरुवर्य व निर्देशक डॉ० भूरेलाल जी के प्रति मैं चिर ऋणी हूँ, जिन्होंने इस विषय का चुनाव करने पर मुझे सुझाव दिये, मेरा उत्साहवर्धन किया, जिनके प्रेरणाप्रद सत् परामर्शों के आधार पर मैं यह शोधकार्य पूरा कर सका।

इस शोधकार्य की प्रेरणा देने वाले, जिनको मुझसे सदैव ऐसे ही कार्यों की अपेक्षा रही ऐसे माता–पिता के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने की औपचारिकता मैं निभाना नहीं चाहता हूँ।

मैं पूज्यनीया प्रो. मीरा दीक्षित, विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद के प्रति विशेष रूप से आभारी हूँ जिनसे मुझे सदैव प्रेरणा

तथा आशीर्वाद प्राप्त होता रहा है जिनके द्वारा सदैव समय–समय पर शोधकार्य में आने वाली कठिनाइयों का निराकरण आसानी से होता रहा है।

मैं अपने विभाग गुरुजनों एवं विद्वानों प्रो० मुश्ताक अली, प्रो० प्रणय कृष्ण, प्रो० कृपाशंकर पाण्डेय, डॉ० सूर्यनारायण सिंह, डॉ० लालसा यादवा, प्रो० कात्यायनी एवं प्रो० चंदा देवी के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मुझे मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन दिया।

मैं अपने दोस्तों शिवनारायण सिंह, नीरज कुमार, रामआशीष, डॉ. रामायण, कमलेंद्र कुशवाहा, डॉ. वीरेन्द्र प्रताप, डॉ. सतीश कुमार यादव, डॉ. अजीत सिंह, डॉ. विश्वदीपक, अभिषेक कुमार गौड़ (सागर वि.वि.), सुनील वर्मा (काशी विद्यापीठ) , शशांक मिश्र (लखनऊ वि.वि.), दुर्गेश कुमार (बुन्देलखण्ड वि.वि.), बलवंत प्रजापति (जे.एन.यू.), अखिलेश कुमार, अमित पाण्डेय, दिलीप राय, कृष्ण मोहन शुक्ला, मनोज सिंह आदि के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने मुझे अपना अमूल्य समय देकर समय–समय पर अपने सुझावों द्वारा इस कार्य के प्रति प्रेरित करते रहे हैं।

कठिन परिस्थितियों में हमारा साथ देकर शोध–प्रबंध के लेखन कार्य से अटूट रूप से जुड़े साथी डॉ. रामचन्द्र रजक के लिए आभार शब्द केवल औपचारिकता लगता है।

शोध कार्य के लिए पुस्तकालयों के महत्त्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। इस शृंखला में हिंदी–साहित्य सम्मेलन प्रयाग, हिन्दुस्तानी एकेडमी, राजकीय संग्रहालय, केन्द्रीय पुस्तकालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय एवं हिन्दी विभाग के पुस्तकालय के साथ ही राका प्रकाशन एवं लोकभारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद के प्रति विशेष रूप से आभारी हूँ जहाँ से मुझे शोध–प्रबंध के लिए आवश्यक सामग्री संकलन में मदद मिली। इसके लिए इनके अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

मेरे इस शोध–प्रबंध को पूर्ण रूप देकर आकर्षक ढंग से सजाने वाले श्री सुनील विश्वकर्मा के प्रति मैं विशेष आभार प्रकट करता हूँ।

गिरिजेश कुमार